पुरातत्त्वाचार्य, पद्म श्री, मनोषी

मुनि श्री जिन विजयजी महाराज

संक्षिप्त जीवन परिचय

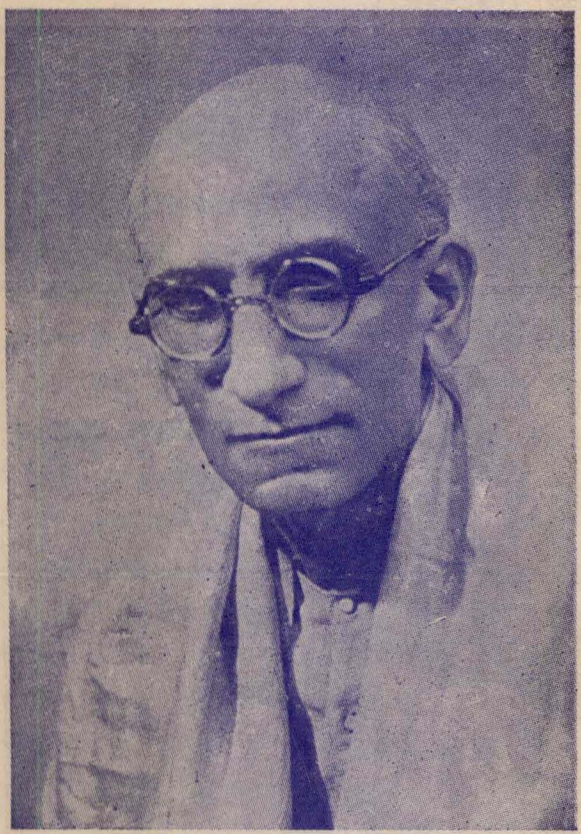

लेखक

डॉ. पद्मधर पाठक, एम्.ए., पीएच्.डी.

प्रवरशोध सहायक

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशक :
केशरपुरी गोस्वामी
अध्यक्ष
सर्वोदय साधनाश्रम
चन्देरिया (चित्तोड़गढ़)

प्रथमावृत्ति, १००० प्रति

अहमदाबाद निवासी
श्रीमती मोतीबहन जोवराज शाह
द्वारा वितरित

१५ अगस्त, १९७१

मुद्रक :
प्रतापसिंह लूणिया
जाब प्रिंटिंग प्रेस
ब्रह्मपुरी, अजमेर।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुरातत्त्वाचार्य मुनि श्री जिनविजयजी महाराज

संक्षिप्त जीवन-परिचय

जन्म : माघ शुक्ला चतुर्दशी वि. सं. १९४४ में मेवाड़ के रूपाहेली नामक गाँव में हुआ था। आपके पिता ठाकुर श्री वृद्धिसिंहजी परमार राजपूत थे। आपकी माता का नाम श्रीमती राजकुमारी था। वि. सं. १९५५ में चार-पाँच महीने की रुग्णता के बाद आपके पिता का स्वर्गवास हो गया। अपने पिता की रुग्णता के दौरान आपका परिचय यति देवीहंसजी से हुआ। यतिजी के प्रति मुनिजी महाराज के मन में अपार श्रद्धा थी और इन्हीं की देखरेख में आपका आरम्भिक शिक्षण कार्य चलता रहा। वि. सं. १९५७ की घटना है—उपाश्रय में पैर फिसल जाने से वयोवृद्ध यतिजी की कूल्हे की हड्डी टूट गई। मुनिजी महाराज के परिवारजनों ने यतिजी की बड़ी सेवा की। इधर एक अन्य यतिवर्य का रूपाहेली आना हुआ जो परिचर्या निमित्त यति देवीहंसजी को चित्तौड़गढ़ के निकट बानेण नामक स्थान ले गए। मुनिजी महाराज भी उनके साथ वहाँ गए।

वि. सं. १९५७ भादों मास में यति देवीहंसजी का स्वर्गवास हो गया। दुर्भाग्यवश इसी वर्ष मुनिजी महाराज के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छोटे भाई श्री बादलसिंह का रूपाहेली में देहावसान हो गया।

वि. सं. १९५८ में अठाना गाँव के निकट मुनिजी का परिचय शैवयोगी महंत खाखी बाबा से हुआ। ये योगी सुखानंद महादेव नामक तीर्थ स्थान में आये थे। विद्याध्ययन की जिज्ञासावश मुनिजी महाराज इन खाखी बाबा के शिष्य बन गए। कोई ६-८ महीनें के बाद ही मुनिजी ने इनका साथ अनेक कारणों से छोड़ दिया।

जीवन में फिर मोड़ आया। सं. १९५९ में कुछ-एक यतियों के साथ मुनिजी मेवाड़ और मालवे में भ्रमण हेतु निकल पड़े। धार रियासत के दिगठाड़ गाँव पहुँचे। वहाँ स्थानकवासी जैन-संप्रदाय के एक तपस्वी साधु से परिचय हुआ और उसी वर्ष उस संप्रदाय में दीक्षित हुए।

दूसरा वर्ष आया। सं. १९६० में धार में चातुर्मास किया और राजा भोज के सरस्वती मंदिर का दर्शन किया और वहाँ के शिलालेखों का अवलोकन करना प्रारम्भ किया। प्रसिद्ध विद्वान् प्रो० श्रीधर भंडारकर से परिचय हुआ।

सं. १९६१ में उज्जैन गए और वहाँ चातुर्मास किया। इस प्रसंग में प्रसिद्ध महाकालेश्वर और चौंसठ योगिनी आदि स्थानों को देखने का सुअवसर मिला। देवास, इन्दौर आदि स्थानों में भ्रमण किया।

अगला चातुर्मास खानदेश के चालीस गाँव तालुके के वाघली नामक गाँव में हुआ। दक्षिण प्रदेश के औरंगाबाद, दौलताबाद और एलोरा की गुफाओं को भी देखा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सं. १९६३ में अहमदनगर जिले के वारी गाँव में चातुर्मास किया। वहाँ से एवला, नासिक आदि स्थानों में घूमे और पुनः सं. १९६४ का चातुर्मास वाघली गाँव में किया। एक बार फिर मालवे की तरफ निकले और बुरहानपुर, असीरगढ़, मऊ होते हुए रतलाम में होने वाले साधु-सम्मेलन में भाग लेने पहुँचे। वहाँ से पैदल भ्रमण करते-करते सं. १९६५ में उज्जैन पहुँचे, चातुर्मास किया। इसी चौमासे में श्रीमुनिजी महाराज ने स्थानकवासी संप्रदाय के भेष को त्याग दिया और विद्याध्ययन की दृष्टि से खाचरोद, रतलाम पालनपुर, अहमदाबाद और पाली मारवाड़ गए। पाली मारवाड़ में जैन श्वेतांबर संप्रदाय के मूर्त्तिपूजक साधुओं से परिचय हुआ। संयोग से उनमें विद्याव्यसनी एक पंडित भी थे। मूर्त्तिपूजक संवेगी-संप्रदाय का साधु-वेष अपना लिया। फिर पंजाब जाने का भी कार्यक्रम बना था और ये सोजत आदि मारवाड़ के नगरों का भ्रमण करते हुए, सं. १९६६ का चातुर्मास ब्यावर में रहे। ब्यावर में इस संप्रदाय के बड़े आचार्य का आना हुआ और उनके अनेक शिष्यों के साथ अध्ययन संबंधी अनेक चर्चाएँ होती रहीं।

इसके बाद गुजरात की तरफ जाना हुआ। वहाँ राधनपुर निवासी एक धनिक सेठ ने शत्रुंजय महातीर्थ की यात्रा के लिए एक संघ निकाला जिसके मुख्य अधिष्ठाता ब्यावर वाले चातुर्मास में मिले जैनाचार्य ही थे। शत्रुंजय यात्रा के बाद उन्हीं आचार्य महोदय व उनके शिष्य समुदाय के साथ श्री मुनिजी नें भावनगर, खम्भात होते हुए सं. १९६७ का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चातुर्मास बड़ौदा में किया। इधर बड़ौदा के एक धनिक गृहस्थ ने खम्भात की खाड़ी के मुहाने पर प्राचीन जैन-तीर्थ स्थान, कावी और गंधार नामक ग्रामों की यात्रा के लिए एक संघ निकाला। श्रीमुनिजी उसमें भी सम्मिलित हुए। इसके बाद भड़ौंच आदि होते हुए सूरत आए। यहाँ पर इन्होंने वयोवृद्ध जैनमुनि श्री कांतिविजयजी महाराज के दर्शन किए और सं. १९६८ का चातुर्मास उन्हीं के साथ सूरत में किया।

सं. १९६९ का चातुर्मास डभोई (गुजरात) में हुआ। अगला चातुर्मास पाटन में हुआ। पाटन के एक धनिक सेठ ने मेवाड़ के ऋषभदेव (केसरियाजी) की यात्रा के लिए संघ निकाला जिसमें श्रीमुनिजी भी सम्मिलित हुए।

केसरियाजी की यात्रा करके वापस गुजरात आ गए और सं. १९७१ का चातुर्मास मेहसाना में किया। फिर पालनपुर गए और सं. १९७२ के चातुर्मास हेतु पाटन गए जहाँ इन्होंने पाटन के भंडारों का निरीक्षण प्रारम्भ किया और प्रयाग की सुप्रसिद्ध पत्रिका सरस्वती के लिए लेख तैयार किया जो जनवरी १९१६ के अंक में प्रकाशित हुआ। शाकटायन पर श्रीमुनिजी के जीवन का प्रथम लेख इसी सरस्वती में छपा था।

जीवन की पहली पुस्तक थी—गुजराती मूल "जैन तत्त्व सार" का हिंदी अनुवाद। सबसे पहला प्रास्ताविक कथन आपने आगरे वाले लाला कन्नोमल जज की पुस्तिका में लिखा था। लिखने का क्रम बढ़ता गया। पाटन के ग्रंथ-भंडारों से प्राप्त एक अप्रकाशित प्राचीन गुजराती भाषा के ग्रंथ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"नेमिनाथ राजमती बारामासा" पर एक लेख तैयार कर "जैन श्वेताम्बर कांफ्रेंस हैरेल्ड" में प्रकाशित किया। पाटन से फिर, मुनिजी ने ऋषभदेव की यात्रा की और कपड़वंज आदि स्थानों का भ्रमण करते हुए बड़ौदा में होने वाले साधु सम्मेलन में सम्मिलित हुए। सं. १९७३ का चातुर्मास भी यहीं बड़ौदा में किया। इस दौरान प्रवर्त्तक कांतिविजयजी के नाम से "जैन ऐतिहासिक ग्रंथ माला" का प्रारम्भ किया, जिसके लिए आपने "कृपा रस कोश", "शत्रुंजय तीर्थोद्धार प्रबंध", "जैन शिलालेख संग्रह" भाग प्रथम "जैन ऐतिहासिक गुर्जर काव्य", "द्रोपदी स्वयंवर नाटक" आदि ग्रंथों का संपादन किया। इसी वर्ष "गायकवाड़ ओरियण्टल सिरीज़" बड़ौदा के लिए "कुमारपाल प्रतिबोध" नामक प्राकृत भाषा के विशाल ग्रंथ का संपादन कार्य भी हाथ में लिया। बड़ौदा से पैदल भ्रमण करते हुए भड़ौंच, सूरत होते हुए बम्बई जा पहुँचे। सं १९७४ का चातुर्मास यहीं बम्बई में किया। यहाँ इन्हीं दिनों "भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इंस्टीट्यूट" पूना का डेपुटेशन आया। जिसने श्रीमुनिजी से विचार-विमर्श कर पूना आने का प्रस्ताव रखा। पैदल भ्रमण करते-करते सं. १९७५ का चातुर्मास पूना में किया। "भण्डारकर इंस्टीट्यूट" के कार्य में सहयोग देने की इच्छा से श्रीमुनिजी ने कुछ समय पूना में ही रहने का विचार किया। इस संस्था के भवन बनवाने के निमित्त जैन संघ की ओर से ५०,००० रुपये की व्यवस्था करवाई और इस संस्था के निकट ही श्रीमुनिजी ने "भारत जैन विद्यालय" नामक संस्था की स्थापना की। इसी बीच भारत की प्रथम प्राच्यविद्या सम्मेलन का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अधिवेशन पूना में ही हुआ। इसमें श्रीमुनिजी ने अनेक प्रकार से सक्रिय सहयोग दिया और अधिवेशन में "हरिभद्राचार्य सूरि के समय" पर संस्कृत में एक निबन्ध पढ़ा। इतना ही नहीं स्व० श्री सतीशचन्द्र विद्याभूषण आदि अनेक विद्वानों के साथ प्रकाशनों की योजनाएँ बनाईं। "जैन साहित्य संशोधक समिति" की स्थापना की और एक त्रैमासिक पत्र तथा ग्रंथमाला के प्रकाशन की योजना बनाई। पूना में रहते हुए लोकमान्य तिलक से संपर्क हुआ और वे स्वयं शास्त्रीय चर्चाओं के उद्देश्य से श्रीमुनिजी के पास कभी-कभी आते रहते थे। पूना विद्वानों का अच्छा खासा केन्द्र बना हुआ था। फरग्यूसन कॉलेज के विद्वानों से भी मुनिजी का परिचय हुआ। प्रो. गुणे, प्रो. रानाडे, प्रो. डी. के. कर्वे आदि प्रसिद्ध विद्वानों से मुनिजी का निकट का संबंध स्थापित हुआ।

सं. १९७६ के चातुर्मास के अंत में श्रीमुनिजी को इंफ्लूएंजा ज्वर का तीव्र आक्रमण हुआ। कई महीने तक श्रीमुनिजी निर्जीव से पड़े रहे। इसी वर्ष 'सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' पूना के कार्यालय में उनकी महात्मा गांधी से भेंट हुई और अपने जीवन के बारे में उनसे कुछ विचार-विनिमय किया।

सन् १९२० में महात्माजी ने असहयोग आंदोलन की घोषणा की। श्रीमुनिजी ने इस राष्ट्रीय आंदोलन में उतरने का संकल्प किया। रेल में बैठकर महात्माजी के पास बम्बई पहुँचे। वहाँ से उन्हीं के साथ अहमदाबाद गए। वहाँ महात्माजी के पास चार-पाँच दिन सत्याग्रह आश्रम में रहे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उनके साथ विविध प्रकार का विचार-विनिमय करते रहते थे। यह निश्चय हुआ कि महात्माजी द्वारा संस्थापित "गुजरात विद्यापीठ" में एक राष्ट्रीय सेवक के नाते मुनिजी सहयोग देते रहेंगे। जीवनक्रम और दिनचर्या में परिवर्तन अनिवार्य हो गया। कुछ दिनों बाद इसी विद्यापीठ में "गुजरात पुरातत्त्व मंदिर" की योजना बनाई और उसके आचार्य पद पर महात्माजी ने मुनिजी की नियुक्ति की। यहाँ से मुनिजी ने "पुरातत्त्व" नामक संशोधनात्मक त्रैमासिक पत्रिका एवं संस्कृत-प्राकृत-प्राचोन गुजराती आदि के ग्रंथों के प्रकाशन-निमित्त "पुरातत्त्व मंदिर ग्रंथावली" माला के प्रकाशन की योजना बनाई और तदनुसार कार्यारम्भ कर दिया।

दिसम्बर सन् १९२१ में कांग्रेस का अधिवेशन नागपुर में हुआ। श्रीमुनिजी भी महात्माजो के साथ वहाँ गए। इन्हीं दिनों नागपुर में आयोजित "जैन पौलिटिकल कांफ्रेंस" की अध्यक्षता की। पूना निवासी जैनियों ने सम्मेत शिखर की यात्रा के लिए विशेष रेल का प्रबंध किया जिसमें तीर्थ-भ्रमण हेतु श्री मुनिजी भी साथ गए। इसी प्रसंग में वे कलकत्ता पहुँचे जहाँ जैन-संघ ने उनके सम्मान में मानपत्र आदि भेंट किए।

दक्षिण के नेपानी गाँव में श्वेताम्बर जैनियों का प्रथम सम्मेलन हुआ जिसकी अध्यक्षता मुनिजी महाराज ने की। थोड़े समय बाद दिगम्बर सम्प्रदाय का अधिवेशन धारवाड़ में हुआ। उसकी अध्यक्षता भी श्रीमुनिजी ने की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९२२-२३ ई. के लगभग पूना में जैन शिक्षण संघ नामक संस्था की स्थापना की और उसके द्वारा कुमार विद्यालय चलाना शुरू किया। पूना से प्रकाशित 'जैन जागृति' पत्र का हिंदी व गुजराती में संपादन किया। 'महावीर' नाम से एक मुद्रणालय खोलने का भी श्रीमुनिजी ने आयोजन किया।

१९२४-२५ ई. में श्रीमुनिजी ने अपना मुख्य केन्द्र अहमदाबाद बना लिया। "जैन साहित्य संशोधक" की प्रकाशन-व्यवस्था अहमदाबाद में कर ली। १९२५-२६ ई. के मध्य जर्मनी के सुप्रसिद्ध विद्वान् प्रो. ल्यूर्डस् और प्रो. शूब्रिंग आदि "गुजरात पुरातत्त्व मंदिर" की साहित्यिक गतिविधियों का परिचय प्राप्त करने अहमदाबाद आए। इन विद्वानों से निकट का सम्पर्क हो जाने से मुनिजी के मन में जर्मनी जाने की इच्छा उत्पन्न हुई। महात्माजी से अनुमति माँगी गई और उन्होंने अपने युरोपियन मित्रों के नाम परिचयात्मक पत्र भी लिख कर, श्रीमुनिजी को अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी।

मई १९२८ ई. में श्रीमुनिजी ने बम्बई से जर्मनी के लिये प्रस्थान किया। जहाज़ निकल पड़ा और पेरिस होते हुए उन्होंने लंदन में अपना पहला आवास किया। कोई चार महीने वहाँ रहे और "ब्रिटिश-म्यूज़ियम" को देखा। लंदन से प्रस्थान कर बेल्जियम, ब्रूसेल्स आदि होते हुए जर्मनी के हैम्बर्ग नामक स्थान पर पहुँचे। यहाँ डॉ. याकोबी, प्रो. ग्लेसनैप और प्रो. शूब्रिंग से मिलना हुआ। प्रो. शूब्रिंग के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साथ हैम्बर्ग यूनिवर्सिटी में लेखन-वाचन का कार्य किया। नवम्बर में बर्लिन गए। वहाँ बर्लिन विश्वविद्यालय के सुप्रसिद्ध प्रोफेसर ल्यूर्डस् के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध हुआ। यही नहीं, बर्लिन में रहने वाले अनेक भारतीयगण, भिन्न-भिन्न राजनीतिक प्रवृत्तियों के संबंध में श्रीमुनिजी के पास आते-जाते रहते थे। यहाँ श्रीमुनिजी ने "हिन्दुस्तान हाउस" की स्थापना की और इस प्रकार भारतीय संस्कृति एवं राजनीतिक प्रवृत्तियों को संगठित करने के प्रयास किए। "इण्डो-जर्मन केन्द्र" नामक एक संस्था को जन्म दिया। लंदन और बम्बई के बड़े-बड़े समाचार पत्रों में इस 'हाउस' की खबरें छपती रहती थीं।

भारत में राजनीतिक हलचलें ज़ोर पकड़ रही थीं। इसकी प्रतिक्रिया विदेशों में भी होनी स्वाभाविक थी। महात्माजी से इस बारे में विचार-विमर्श के लिए श्रीमुनिजी ने भारत आना आवश्यक समझा। नवम्बर १९२९ ई. के अंत में वे बर्लिन के सर्वप्रसिद्ध दैनिक पत्र के विशेष प्रतिनिधि श्री. फॉनमोलो को साथ लेकर भारत रवाना हुए। कोलम्बो, मद्रास, बम्बई होते हुए अहमदाबाद पहुँचे। महात्माजी को जर्मनी की सारी बातों से अवगत कराया। स्व. वल्लभ भाई पटेल को भी वहाँ की गतिविधियों से परिचित कराया। इसके तुरन्त बाद स्व० महादेव भाई देसाई की प्रेरणा से महात्माजी के साथ श्री मुनिजी ने लाहौर के कांग्रेस अधिवेशन में भाग लिया। फरवरी-मार्च में कलकत्ते के स्व. बहादुर-सिंहजी सिंघी का आग्रहपूर्ण निमंत्रण मिला। श्रीमुनिजी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वहाँ गए। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर की प्रबल इच्छा थी कि उनके विश्वविख्यात शान्तिनिकेतन के विश्व-भारती-केन्द्र में जैन शिक्षा पीठ की स्थापना की जाय। सिंघीजी ने गुरुदेव से मिलने का प्रबन्ध किया। तदनुसार शान्तिनिकेतन में जैन शिक्षा पीठ की योजना बनी और उसका संचालन करना मुनिजी ने स्वीकार किया।

इधर महात्माजी ने नमक सत्याग्रह आंदोलन का कार्यक्रम तैयार किया और अहमदाबाद के सत्याग्रह आश्रम से डाँडी कूच की यात्रा प्रारम्भ की। महात्माजी की इच्छानुसार श्रीमुनिजी भी मई में ७५ स्वयंसेवकों के साथ इस कूच को चल पड़े। अहमदाबाद से दो तीन स्टेशन आगे निकले ही थे कि इन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और सजा सुनाकर बम्बई के वोरली कारावास में भेज दिया गया। वहाँ से कुछ दिन बाद नासिक जेल भेज दिया गया। यहाँ देश के अन्य प्रसिद्ध देश सेवकों से मिलने का सुअवसर मिला। इनमें स्व० जमनालाल बजाज, श्री के० नरीमान, आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। वहीं पर कुछ दिनों बाद स्व० कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी भी आ पहुँचे। जेल-निवास में लिखने-पढ़ने का अच्छा अवसर प्राप्त हुआ। सजा की अवधि पूरी होने पर अक्टूबर में जेल से बाहर आए और श्री मुंशी के साथ सीधे बम्बई पहुँचे। बम्बई पहुँचने पर श्रीमुनिजी व मुंशीजी का भव्य स्वागत हुआ।

जेल में रहते समय श्रीमुंशीजी के साथ भावी साहित्यिक प्रवृत्तियों पर अनेक चर्चाएँ होती रहती थीं। फलस्वरूप अँधेरी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में भारतीय विद्या भवन का कार्य शुरू करने का संकल्प किया गया।

कलकत्ते के श्री बाबू बहादुरसिंह जी सिंघवी ने गुरुदेव की इच्छा को पुनः दुहराया और श्रीमती मोतीबेन व अन्य ८-१० बालकों को लेकर श्रीमुनिजी शांति-निकेतन पहुँचे। गुरुदेव बड़े प्रसन्न हुए और विद्या-भवन के प्रधानाचार्य महा-महोपाध्याय श्री विधुशेखर शास्त्री से कहकर श्रीमुनिजी के निवास आदि का बड़ा उत्तम प्रबन्ध करवाया। सिंघीजी के पिता श्री डालचन्दजी सिंघी के नाम से वहाँ पर जैन छात्रालय की स्थापना करवाई। विद्या-भवन में "जैन चेयर" स्थापित कर उसका संचालन श्रीमुनिजो ने किया। कुछ दिनों बाद जैन छात्रालय और "चेयर" निमित्त एक स्वतंत्र मकान भी शान्ति-निकेतन में बनवाने का निश्चय किया। जिसका शिलान्यास स्वयं गुरुदेव के हाथों सम्पन्न हुआ। यहाँ से सुप्रसिद्ध विश्वविख्यात "सिंघी जैन ग्रन्थ माला" का कार्य श्रीमुनिजी ने आरम्भ किया। इस जैन छात्रालय में कलकत्ते के भी अनेक जैन छात्र व विद्वान् प्रविष्ठ हुए। "सिंघी जैन ग्रंथमाला" का मुद्रण कार्य बम्बई के सुप्रसिद्ध "निर्णय-सागर प्रेस" से करवाया जाता था। कलकत्ते आदि में ऐसे योग्य प्रेस का अभाव था। माला के लिए अच्छे-अच्छे हस्तलिखित ग्रंथों के चयन के लिए श्रीमुनिजी पाटण के भंडारों का निरीक्षण करते रहे। पूना के भांडारकर प्राच्य शोध संस्थान के प्राचीन साहित्य का भी अवलोकन करने जाना पड़ता था। प्रायः ४ वर्ष शान्ति-निकेतन में रहने के कारण, इतना अधिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भ्रमण करना पड़ा कि श्रीमुनिजी के स्वास्थ्य में दुर्बलता आ गई। कभी बम्बई, कभी पूना, कभी पाटन। शांति-निकेतन की जलवायु में मलेरिया का जब तब आक्रमण होता रहा। अतः सिंघीजी के परामर्श से अहमदाबाद वापस आ गए।

इसी बीच सन् ३५-३६ के लगभग राजस्थान के प्रसिद्ध जैन तीर्थ ऋषभदेवजी (केसरियाजी) के विषय में उदयपुर राज्य में एक आयोग बिठाया गया जिसमें केसरियाजी के स्वामित्व के अधिकारों का विवाद निपटाना था।

जैन श्वेताम्बर कान्फ्रेंन्स के नेताओं के आग्रह के कारण मुनिजी ने इस विवाद के ऐतिहासिक पहलुओं को सुलझाने के लिये प्रमुख भाग लिया। इस विवाद में एक पक्ष की ओर से स्व० सर चिमनलाल सेतलवाड़ तथा उनके सुपुत्र भारत के विशिष्ठ विधिवेत्ता श्री मोतीलाल सेतलवाड़ जैसे महारथी भाग ले रहे थे। दूसरे पक्ष की ओर से स्व० कायदे आजम मि० जिन्ना तथा स्व० के० एम० मुंशी जैसे चोटी के न्यायवेत्ता थे।

मुनिजी ने इस विवाद में कोई तीन महीने उदयपुर में रह कर अपने ऐतिहासिक ज्ञान का परिचय कराया। जिससे दोनों पक्षों के महारथी विस्मित हुए।

सन् १९३८-३९ में श्री मुंशीजी ने भारतीय विद्या भवन की योजना के लिए श्रीमुनिजी को साग्रह आमंत्रित किया। उस समय श्रीमुंशी बम्बई राज्य के गृहमंत्री थे। योजना बन गई और १९३९ई. में इसकी स्थापना हुई। इसी वर्ष उदयपुर में सर्वप्रथम राजस्थान हिन्दी साहित्य सम्मेलन हुआ जिसकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अध्यक्षता श्रीमुनिजी ने की। बम्बई में रहते हुए "सिन्घी जैन ग्रंथमाला" व "भारतीय विद्या भवन", दोनों का ही कार्य बड़े वेग से चलाते रहे। सरस्वती की कृपा थी।

सन् १९४२ में जैसलमेर के प्राचीन ग्रंथ भण्डारों का इन्होंने निरीक्षण किया। अपने साथ वे १०-१५ विद्वान् मित्रों को ले गए थे। ४-५ महीनें जम कर वहाँ के अति दुर्लभ एवं प्राचीन ग्रंथों की प्रतिलिपियाँ तैयार करवाईं। फिर वापस बम्बई आ गए। श्रीबहादुर सिंहजी सिन्धी भी कार्यवश बम्बई आए हुए थे। भारतीय विद्या भवन की विशेष सुव्यवस्था की दृष्टि से और श्रीमुंशीजी के आग्रह से श्रीमुनिजी ने भवन के "ऑनरेरी डायरेक्टर" का पद स्वीकार किया। श्री सिन्घी जी के परामर्श से "सिन्घी जैन ग्रन्थ माला" का प्रकाशन कार्य भी भवन के अन्तर्गत कर दिया गया।

सन् १९४४-४५ में उदयपुर के अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन हुआ। श्रीमुनिजी इसके स्वागताध्यक्ष थे। राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन को परामर्श देकर श्रीमुंशी को इसका मुख्याध्यक्ष बनवाया।

सन् १९४६-४७ में श्रीमुंशी की नियुक्ति उदयपुर राज्य के सलाहकार के पद पर हुई। इस प्रसंग से मुनिजी का भी राजकीय वर्ग से परिचय हुआ और उन्होंने उदयपुर में "प्रताप विश्वविद्यालय" की स्थापना की योजना रखी। इस शुभ कार्य के लिए स्व० महाराणा श्री भूपालसिंहजी ने एक करोड़ रुपये देने की घोषणा की और श्रीमुनिजी को संयोजक के रूप में नियुक्त किया। एक के बाद एक राज-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नीतिक घटनाचक्रों के कारण विश्वविद्यालय न बन सका और श्रीमुंशी भी मुक्त होकर चले गए। श्रीमुनिजी भी दिल्ली की कॉन्स्टीट्यूट असेम्बली की ओर से भाषा विषयक समिति से सदस्य हो गए जिसके कारण उनका दिल्ली आना जाना बना रहा।

जीवन के अनेक वर्ष अथक् परिश्रम में बीत चुके थे। श्रीमुनिजी का विचार हुआ कि राष्ट्रीय तीर्थ चित्तौड़गढ़ के निकट कहीं आश्रम बनाया जाये। अतः मई १९५० में चन्देरिया में सर्वोदय साधना आश्रम की स्थापना की। ऐसे महामानव और कर्मठ तपस्वी को राष्ट्र खाली कब बैठने देता। परिणाम-स्वरूप राजस्थान सरकार ने उनके तत्त्वावधान में "राजस्थान पुरातन मंदिर" (अब राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान) की स्थापना की। आज इसका मुख्य कार्यालय जोधपुर में है। यहाँ से श्रीमुनिजी के निर्देशन में "राजस्थान पुरातन ग्रंथ-माला" के अन्तर्गत बहुत से अल्पज्ञात एवं प्राचीन ग्रंथों का प्रकाशन हुआ। इसमें कोई सन्देह नहीं कि "सिन्घी जैन ग्रंथमाला" एवं "राजस्थान पुरातन ग्रंथमाला" के माध्यम से श्रीमुनिजी ने राष्ट्र की वह सेवा की है कि आज से सौ वर्ष बाद उनके नाम की पूजा तक हो सकती है।

सन् १९५२ में विश्वविख्यात "जर्मन ओरियण्टल सोसायटी" ने उन्हें सम्मान्य सदस्य (ऑनरेरी मेम्बर) बनाकर सर्वोच्च सम्मान दिया। श्रीमुनिजी भारत में दूसरे व्यक्ति हैं जिन्हें यह दुर्लभ सम्मान प्राप्त हुआ है। सन् १९६२ में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राष्ट्रपति बाबू राजेन्द्रप्रसादजी ने श्रीमुनिजी को "पद्मश्री" प्रदान कर इनका सम्मान किया। सन् १९६३ में "भारतीय विद्या भवन" बम्बई ने आपको सम्मानित सदस्य नियुक्त कर आपकी सेवाओं के प्रति विशिष्ठ सम्मान प्रदर्शित किया।

इस संक्षिप्त जीवनी में सैकड़ों ऐसे पहलू हैं जिनका वर्णन स्थानाभाव के कारण नहीं हो सका है। हो भी कैसे, साधक हर क्षण जीवन से जूझता है। उसका हर क्षण भावी पीढ़ी के लिए प्रेरणा का स्रोत बनकर अनन्त में विलीन हो जाता है। श्रीमुनिजी की साधना और लम्बी तपस्या से हमें यही सबक मिलता है। यों तो दुनिया एक सराय है—एक आता है, एक जाता है पर अपने प्रत्यक्ष अनुभव से कह सकता हूँ कि श्रीमुनिजी ने इस संसार में रहकर सभी की भलाई की है। मैं दिल्ली विश्वविद्यालय में था। वहाँ अनेक प्रोफ़ेसरों से निकट का संबंध रहा। जब-जब मैंने उन्हें बताया कि जयपुर, जोधपुर में श्रीमुनिजी के दर्शनों का अवसर मिला, वे तुरन्त नतमस्तक होकर मेरे इस सौभाग्य से ईर्ष्या करने लगते थे। मैं सुख का अनुभव करता था। कई बार राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरणजी गुप्त, पं० बनारसीदासजी चतुर्वेदी, श्री दिनकर आदि श्रीमुनिजी महाराज की चर्चा करते रहते थे। गुप्तजी बड़े सहज में कहा करते थे कि हमारे बीच श्रीमुनिजी ऐसे तपस्वी व्यक्ति का लौटना असम्भव है।

बड़ी प्रसन्नता की बात है कि श्रीमुनिजी महाराज अभी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हमारे बीच हैं। चंदेरिया आश्रम में एकान्तवासी योगी की भाँति हमें प्रेरणा दे रहे हैं। एक दिन सभी को जाना है—पर चंदेरिया का उनका आश्रम व मंदिर, चित्तौड़गढ़ का हरिभद्रसूरि स्मारक, ऐसे स्थल हैं जहाँ निश्चय ही "जुटेंगे हर बरस मेले।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

डॉ० पद्मधर पाठक एम्. ए. पी.एच. डी.

पुरातत्त्वाचार्य पद्मश्री मुनि जिन-विजयजी की प्रेरणा एवं प्रयत्न से, राजस्थान सरकार द्वारा प्रस्थापित "राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान" (राज. ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट) जिसका मुख्य कार्यालय जोधपुर में है तथा जयपुर, उदयपुर, चितौड़गढ़, कोटा, टोंक, अलवर और बीकानेर में जिसके शाखा कार्यालय स्थापित हैं—मुनिजी इस संस्थान के संस्थापक एवं १७ वर्ष प्रयन्त सम्मान्य निदेशक (ऑनरेरि डायरेक्टर) रहे।

मुनिजी के पास प्रतिष्ठान में अध्ययन, संशोधन, संपादन आदि कार्य करने निमित्त शोध सहायक के रूप में जो कतिपय अध्ययनेच्छु प्रविष्ठ हुये, उनमें डॉ. पद्मधर पाठक एक विशिष्ठ प्रतिभा सम्पन्न, परिश्रमशील, अध्ययनप्रिय और विद्याविलासी विद्वान् हैं।

प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान में प्रविष्ठ होने से पहले, ये दिल्ली विश्वविद्यालय के शोध कार्य के उत्साही और अध्ययनशील छात्र रहे हैं। राजस्थान के प्राचीन इतिहास की सामग्री का अन्वेषण करने निमित्त, इनको विशिष्ठ छात्रवृत्ति मिली थी। तीन चार वर्ष तक इन्होंने राजस्थान के अनेक स्थानों में रह-कर, अपना गहरा गवेषणा कार्य संपन्न किया।

बाद में उक्त प्रतिष्ठान में प्रविष्ठ होकर प्रतिष्ठान के बहुविध संशोधन कार्यों में योग देते हुये इन्होंने, ग्रंथों के संपादन कार्य में भी निपुणता प्राप्त की। "बुद्धिविलास"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नामक एक प्राचीन राजस्थानी ग्रंथ का उत्तम संपादन किया। कई संशोधनात्मक लेख और निबन्ध प्रकाशित किये। अभी हाल ही में इनकी लिखी हुई, हिन्दी भाषा के एक परम् हितैषी, अँग्रेज विद्वान् फ्रेडरिक पिकौंट के व्यक्तित्व और कर्तृत्व विषयक, विशिष्ठ महत्व की शोध पुस्तक, काशी की सुप्रसिद्ध "नागरी प्रचारिणी सभा" द्वारा प्रकाशित हुई है, जो हिंदी भाषा के आरम्भिक युग के बारे में अभिनव प्रकाश डालने वाली है।

डॉ० पद्मधर पाठक ने अपनी पीएच. डी. की डिग्री के लिये जो महानिबन्ध लिखा है वह भी अपने विषय का एक विशिष्ठ शोध ग्रंथ है। इस ग्रंथ का विषय है "मुगल कालीन खाद्य सामग्री।" सुप्रसिद्ध परीक्षक विद्वानों ने इस ग्रंथ को एक मूल्यवान् सामग्री प्रदान करने वाला बताया है।

डॉ० पद्मधर पाठक, हिंदी के महा-मनीषी, उन्नायक, और अमरनाम प्राप्त करने वाले स्वर्गीय श्री श्रीधरजी पाठक के पौत्र हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org